अनुभव दर्शन

अध्याय 1

बोध के अनन्तर मैं में और मेरा की निर्भ्रान्ति के अर्थ में ब्रह्म जिज्ञासा

मैं= चैतन्य इकाई का मध्यांश= आत्मा; मेरा = बुद्धि, चित्त, वृत्ति, मनः इनमें आत्मानुगामी बनने योग्य क्षमता की प्रस्थापन प्रक्रिया ही साधना, फलतः जागृति

ब्रह्म— व्यापक, अपरिगामी, अस्तित्वपूर्ण; क्रिया— सीमित, परिगामी, स्थितिशील

ज्ञान, विवेक, विज्ञानपूर्वक जिम्मेदारी, भागीदारी का निर्वाह ही पूर्ण जागृति का प्रमाण;

मानव की अभिव्यक्ति में भाषा एक आयाम; मानव अपने में संपूर्णता के साथ ही पूर्ण वस्तु को अभिव्यक्त करता है।

निभ्रम अवस्था में मैं= आत्मा; अनुभवमूलक विधि से बुद्धि, चित्त, वृत्ति एवं मन आत्मा में अभिभूत/अनुप्राणित; भ्रमित अवस्था में मैं= अहंकार

मनःस्वस्थता को प्रमाणित करने के क्रम में हर नर—नारी अनुभवमूलक विधि से आत्मबोध सहित प्रमाणित होना सहज एवं आवश्यक

ब्रह्म(प्राप्त) की अनुभूति एवं इकाई(प्राप्य) का आस्वादन और सानिध्य

प्रकृति(क्रिया समुच्चय) और पुरूष(ब्रह्म) का सह—अस्तित्व नित्य; प्रकृति विकासभेद पूर्वक 4 अवस्थाओं के रूप में

शक्ति का अंतर्नियोजनपूर्वक जागृति; भ्रममुक्ति= ब्रह्मनुभूति= आनंद की निरंतरता = मोक्ष पद

ब्रह्मानुभूति बोध(निरंतर आनंद) पूर्वक ज्ञानेन्द्रिय के आस्वादन सुख की उपेक्षा = पर—वैराग्य

ब्रह्म मध्यस्थ सत्ता; आत्मा मध्यस्थ क्रिया

'यह'= शून्य, ज्ञान, साम्यसत्ता, ज्योति, समस्त क्रिया का आधार

'यह' में अनुभव आत्मा को और बोध बुद्धि को होता है।

जीवन मुक्त(भ्रम मुक्ति) में आप्तता का अभाव नहीं; भूत, भविष्य की पीड़ा नही और वर्तमान का विरोध नहीं; आप्ततापूर्वक अन्य की जागृति में सहायक; अतः प्रमाण सहित उपदेश (उपाय सहित आदेश)

अध्याय 2

उत्पादन समत्व नियमपूर्वक, व्यवहार समत्व न्यायपूर्वक, विचारसमत्व समाधान/धर्मपूर्वक, अनुभव का समत्व ब्रह्म सहज व्यापकता में प्रत्यक्ष है।

ब्रह्म देश, काल अबाध, पारगामी; इकाई ब्रह्म में समाहित, संपृक्त

ब्रह्मानुभूति पर्यंत परिमार्जन

जीवावस्था में आशा का परिवर्तन, परिमार्जन

ज्ञानावस्था में आशा, विचार, इच्छा, संकल्प का परिमार्जन

चैतन्य= स्वयं में क्रियाशील, संवेदनशील, संज्ञानशील

अनुभव समुच्चय= समत्व= सहज समाधि; ब्रह्मानुभूति= पूर्ण समाधान

समाधान, समत्व, मुक्ति, हर्ष के लक्षण– असंग्रह, स्नेह, विद्या, सरलता/सहजता, अभय

मरीचिका, अंधकार, मृत्यु भ्रमवश

स्वकर्म–परिपाक संस्कार, अध्ययन, वातावरण ही स्वतंत्रता और स्वतंत्रता के कारण

जड़ प्रकृति की सत्यता का ज्ञान, चैतन्य का बोध और व्यापकता में अनुभव स्वयं सिद्ध

मानव शरीर को इच्छानुसार संचालित करने वाला चैतन्य पुंज= ज्ञानात्मा

जीव शरीर को आशानुरूप संचालित करने वाला चैतन्य पुंज= जीवात्मा

वस्तु(जड़) में गुण, रचना में परिणाम, परिवर्तन; चैतन्य में आशा, विचार, इच्छा में गुणात्मक परिवर्तन, परिमार्जन

भ्रांत इकाई– विषय भोग, भ्रांताभ्रांत– तीन ऐषणा, निभ्रांत इकाई– ब्रह्मानुभूति

जड़ परमाणु गठनशील, चैतन्य परमाणु गठनपूर्ण

अंतर्यामी (व्यापक) में बोध होने पर आत्मीयता/अनन्यता पूर्वक संसार को एक परिवार के रूप में स्वीकारना

दासत्व – व्यवहार, कर्म, विचार; इनमें क्रमशः न्याय, समाधान, अनुभूति योग्य क्षमता संपन्नता प्रमाणित नहीं

नियमपूर्ण उत्पादन, न्यायपूर्ण व्यवहार, समाधान पूर्ण विचार और सत्ता में अनुभवपूर्ण क्षमता से संपन्न होना ही स्वतंत्रता का आद्यान्त लक्षण

दिव्य मानव– ब्रह्मानुभूति, देवमानव– ब्रह्मप्रतीति, मानव– ब्रह्म–आभास, अमानव – ब्रह्मभास

क्रिया (स्थूल, सूक्ष्म, कारण) और ब्रह्म (अखण्ड, पूर्ण, व्यापक) में लक्षण भेद

सत्यानुभव आत्मा में, बोध बुद्धि में, प्रतीति चित्त में, आभास वृत्ति में, भास मन में

स्वागत भाव में अनुभव हेतु और आस्वादन भाव में भोग हेतु अनुमान–अंकुर; लक्षण व लक्ष्य के योगफल में अनुमान का उदय

वस्तु स्थिति– सामयिक सत्य; काल–क्रिया–परिणाम से मुक्त नित्य सत्य= ब्रह्म

संवेदनाओं के आस्वादन की अपेक्षा में स्वागत भाव का अधिक हो जाना ही जागृति की ओर गति

उत्पादन, व्यवहार और विचार की उपादेयता अनुभव की आशा, आकांक्षा में

कम विकसित के साथ उत्पादन, समान के साथ व्यवहार, अधिक श्रेष्ठ का सानिध्य, व्यापकता में अनुभव

अध्याय 3

क्रिया समूह= विराट= गतिशील, स्पंदनशील, कंपनशील, तरंगित

क्रिया समूह का आधार= ब्रह्म

अनुभव में वर्तमान क्रिया प्रतिष्ठा; भूत और भविष्य का अनुमान

अनुमान – साधार, निराधार ; नियम–प्रक्रिया, लक्षण सहित साधार अनुमान

क्रिया और इकाइयों का सानिध्य एवं सहवास

ज्ञानात्मा भ्रमपर्यंत शरीर त्याग के समय सुख/दुख, सुरूप/कुरूप के प्रभाव से पूर्णतः प्रभावित हो जाता है, जो स्वप्रभावीकरण है। यही जन्म परिपाक प्रक्रिया है।

संस्कार का प्रत्यक्ष रूप, मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि की सक्रियशीलता है, जो तात्रय की सीमा में

स्थिति एवं क्रिया संकेत ग्रहण क्षमता ही व्यंजनीयता; वातावरणस्थ क्रिया संकेत ग्रहण व प्रसारण क्षमता ही व्यंजना है।

मन– प्राण– हृदय– शरीर– व्यवहार

आशा और विचार के स्पंदन के अनुरूप प्राणोद्दीपन और प्राणोद्दीपन के अनुरूप आशा व विचार का स्पंदन

प्रत्यावर्तन ही पूर्वानुक्रम

ब्रह्मानुभूति में परमानंद, आत्मानुभूति में आनंद, बुद्धि की अनुभूति में संतोष, चित्त की अनुभूति में शांति एवं वृत्ति की अनुभूति में सुख है। यही अनुभव समुच्चय है।

धीरता, वीरता, उदारतापूर्ण स्वभाव, ऐषणात्रय पूर्ण विषय प्रवृत्ति एवं न्याय, धर्म, सत्य पूर्ण दृष्टि ही मानवीयता की महिमा

अध्याय 4

गुण– आगंतुक, अर्जित

शरीर शक्ति का नियोजन– उत्पादन, उपयोग, वितरण व सदुपयोग में

संवेग तीव्र, मंद और सूक्ष्म भेद में द्रष्टव्य है; जो क्रम से तीव्र, कारण और सूक्ष्म इच्छाओं पर आधारित है।

संज्ञानीयतापूर्वक संवेदनाएँ नियंत्रित; पूर्णता के अर्थ में संकेतानुसार वेग ही संवेग

नया संस्कार = पूर्ण संस्कार + अध्ययन + वातावरण

जागृति के लिए अपेक्षित उच्च संस्कारों द्वारा ही सामाजिकता संभव व सुलभ है।

अध्ययन की पुष्टि हेतु प्रकाशन, प्रचार, प्रदर्शन; जो व्यवस्था पर आधारित

अनुभूति योग्य अर्हता को उत्पन्न कर देना ही संस्कार; ब्रह्मानुभूति योग्य क्षमता, योग्यता, पात्रता से संपन्न होने पर्यंत गुणात्मक संस्कारपूत होना भावी/आवश्यक

अभ्युदयकारी अध्ययन, व्यवस्था व तदनुसार आचरण ही समाज

अध्याय 5

ज्ञानात्मा का लक्ष्यः– आनंद की निरंतरता; जो जागृतिपूर्वक सफल

उत्पादन– स्थूल शरीर के पोषण, संरक्षण और समाज गति हेतु; इसी हेतु यांत्रिक, तांत्रिक प्रयोग

आस्वादन से जड़ पक्ष की पुष्टि, मन को सुख/दुख भासना; सुख का भास–आभास ही उसकी निरंतरता की जिज्ञासा हेतु कारण

न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवहारपूर्वक सुख, शांति; धर्मपूर्ण विचार पूर्वक संतोष और ब्रह्मानुभूति ही परमानंद

चैतन्य क्रिया एवं आचरण में परिमार्जन, गुणात्मक परिवर्तन

आहार, विहार, शय्या क्षणभंगुर; विलासिता से आनंद की निरंतरता नहीं; ये सभी आवश्यक(प्रिय)– अनावश्यक– अप्रिय– असहनीय

वित्तेषणा– पुत्रेषणा– लोकेषणा(देवमानव)

जिसके उत्पादन का अधिकांश वितरण में और न्यून अंश उपयोग, सदुपयोग के निमित्त प्रयोग होता है; वही ब्रह्मानुभूति क्षमता को पाने का अधिकारी

अध्याय 6

पदार्थ– प्राण– जीव– भ्रांत मानव– मानव– देवमानव– दिव्य मानव

प्रकृति दर्शनक्रम में स्वयं की अध्ययन स्पष्टता ही ब्रह्मानुभूति योग्य क्षमता

काल, विस्तार व इकाई की गणना

अनुभव समुच्चय ही स्वतंत्रता; दर्शन समुच्चयपूर्वक कार्यक्रम समुच्चय का अनुसरण करना ही साधना; फलतः अनुभव

निर्भ्रम अवस्था में बुद्धि अजेय और ज्ञानात्मक अमर; जीवन स्वयं अमर एवं अजेय

स्वतंत्रता ही अजेयत्व(सतर्कता) और अनुभव ही अमरत्व(सजगता)

पुरूष और स़्त्री शरीर चलाते हुए जीवन की वैचारिक दातव्यता समान; प्राणकोशिकाएँ सूक्ष्म शरीर के निर्देशानुसार आकार प्रदान करने के लिए प्रयासरत

वातावरण अनुसार जीवात्मा के शरीर और उनकी आशा में परिवर्तनशीलता प्रत्यक्ष

ज्ञानात्मा द्वारा स्व आशा, विचार, इच्छापूर्वक उत्पादन, व्यवहार, उपयोग, उपभोगात्मक क्रियाकलाप; तदनुसार वैचारिक परिवर्तन, परिमार्जन;

इसी क्रम में जिज्ञासा व प्रयासपूर्वक गुणात्मक विकास से संपन्न।फलतः अनुभव, अनुभव इकाई की अर्जित क्षमता, योग्यता, पात्रता; इसी हेतु समस्त प्रयास

अध्याय 7

रूप, गुण, स्वभाव, धर्म के आधार पर वैविध्यता की स्थिति

निद्रा जड़ प्रकृति का स्वाभाविक गुण; चैतन्य जागृति क्रम में

रूप और गुण के योगफल में विषम; रूप, गुण और स्वभाव के योगफल में सम; रूप, गुण, स्वभाव, धर्म के योगफल में मध्यस्थ प्रतिष्ठा

अभिव्यंजना की पूर्ण ग्रहण क्रिया/वस्तु स्थितिवत्ता की पूर्ण स्वीकृति ही अनुभूति

अधिक विकसित की अभिव्यंजना(गुणात्मक विकास का संकेत) और कम विकसित की व्यंजना(उपयोगिता का संकेत)

ब्रह्मानुभूति हेतु मानवीयतापूर्ण व्यवहार, अतिमानवीयता योग्य अभ्यास ही एकमात्र उपाय

आस्वादन की क्षणभंगुरता, सानिध्य में प्रेरणा एवं संघर्ष की असहनीयता

क्लेष व हर्ष कर्म परिपाक वश भाषित; सत्कर्म में प्रवृति हेतु आप्तों का उपदेश

ब्रह्मानुभूति योग्य अधिकार पाना ही चित्त शुद्धि; मानव का आद्यान्त इष्ट ब्रह्मानुभूति ही है।

इसके अनुकूल व्यवसाय, व्यवहार, विचार; विधि–व्यवस्था; अध्ययन, शिक्षा–प्रणाली; विनिमय एवं उपयोग प्रणाली का प्रणयन, उन्नयन तथा पालन, अनुसरण ही सर्वमंगलमय कार्यक्रम

अध्याय 8

वास्तविकता– चेतना, चैतन्य, जड़

परमाणु की सीमा में ही विकास, ह्रास; प्रस्थापन व विस्थापन प्रक्रिया भौतिक, रासायनिक सीमा में

स्थिति भास रहते हुए विश्लेषण–अनुभव का अभाव ही ज्ञातव्यता में अपूर्णता, प्राप्तव्यता में अभावता; फलतः होतव्यता में सशंकता

'होने' का प्रकटन पदार्थ अवस्था में गठनपूर्वक गति के रूप में, प्राण अवस्था में रचनापूर्वक आस्वादन के रूप में, जीवावस्था में आशापूर्वक विहार के रूप में; 'मैं हूँ' का प्रकटन ज्ञानावस्था में विचारपूर्वक व्यवहार व विहार के रूप में

सत्तात्मक अस्तित्व और दृश्यात्मक अस्तित्व

गठनपूर्णता ही चैतन्यता, अमरत्व; सामाजिकता ही सतर्कता; सह–अस्तित्व अनुभूति ही सजगता, पूर्ण विश्राम

गति से उत्पन्न सापेक्ष शक्ति के अंतर्नियोजन, बहिर्गमन प्रक्रिया पर विकास और ह्रास आधारित

अध्ययन से संबंधित क्रिया ही प्रयोग, व्यवसाय, व्यवहार, प्रयास और अभ्यास है।

प्रकृति में अंतिम ह्रास, विकास का दर्शन तथा उसमें पाये जाने वाले नियमों का विश्लेषित होना ही अध्ययन

मनुष्य अभ्यासपूर्वक मानवीयता, देव मानव, दिव्य मानव में प्रतिष्ठित; प्रत्यक्ष रूप = दया, कृपा, करूणा

अध्याय 9

समाधानपूर्वक/गामी तर्क ही सतर्कता(मानवीयता); निर्भ्रमता ही सजगता(दिव्य मानवीयता)

अमानवीयता की सीमा से मुक्ति क्रिया ही परिपूर्णता से, ऐषणाओं की मुक्ति आचरण की पूर्णता से

वस्तुस्थिति और वस्तुगत सत्य का दर्शन; स्थिति सत्य(सत्ता) में अनुभव उदय ही जागृति; प्रत्येक इकाई में किसी न किसी अंश में उदय दर्शन क्षमता द्रष्टव्य; ब्रह्मानुभूति पर्यंत उदय और अनुमान का अभाव नहीं

धर्म की विशालता और अनुभव में अपरिमितता प्रमाणित

ज्ञान अनुभव तथा क्रिया दर्शन

अनुभवमूलक विचार ही व्यवहार में सह–अस्तित्व तथा व्यवसाय में समृद्धि

अनुभवानुशासन ही प्रबुद्धता; सतर्कता(समाधान क्षमता) और सजगता(अनुभव क्षमता) ही इसका प्रत्यक्ष रूप

चैतन्य इकाई का प्रथम साधन= शरीर; ज्ञानावस्था का धर्म= आनंद

संपूर्ण अविकसित, विकसित के लिए साधन और विकसित, अविकसित के लिए उपयोगी– पूरकता सूत्र

शिक्षा प्रणाली और व्यवस्था पद्धति की सीमा में सतर्कता योग्य क्षमता को जन सामान्य बनाने की व्यवस्था

सतर्कता ही विवेक, सतर्कता की अंतिम उपलब्धि ही समाधान

सजगता की अंतिम उपलब्धि= परमानंद= सहजता

परमानंद निरंतरता में दया, कृपा, करूणा निःसृत; जो अविकसित के विकास के लिए सर्वाधिक उपयोगी

अनुभव + अनुमान + प्रयोग, व्यवहार, अभ्यास= पुनः अनुभव

ब्रह्म में अनुभव प्रमाण सहित इंगित; प्रकृति की चार अवस्थाओं के विश्लेषण की व्यवहार प्रमाण सहित व्याख्या; प्रयोग प्रमाण की स्वीकृति; इस आधार पर पूर्णतया व्यवहारिक सर्वमंगल/अभ्युदयात्मक कार्यक्रम